[Kumar *, Vol.5 (Iss.3): March 2017]
ICV (Index Copernicus Value) 2015: 71.21

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

INTERNATIONAL JOURNAL OF RESEARCH – GRANTHAALAYAH
A knowledge Repository

Social

संत बेनामी जी के काव्य का अभिव्यंजना-कौशल

सतीश कुमार[*1]
[*1] महात्मा गाँधी काशी विद्यापीठ, वाराणसी

DOI: https://doi.org/10.29121/granthaalayah.v5.i3.2017.1775

1 बेनामी जी के काव्य में अभिव्यंजना दृष्टि

किसी भी साहित्य के भाव पक्ष (अभिव्यक्ति पक्ष) और कला पक्ष (अभिव्यंजना–पक्ष) अनिवार्यतः स्वीकार किए गए हैं। भाव पक्ष अथवा अभिव्यक्ति पक्ष में रचनाकार अपने भावों को जनमानस तक पहुँचाता है। दूसरे शब्दों, में यदि कहें तो यह कह सकते हैं कि रचनाकार अपनी रचना के माध्यम से जो संदेश समाज को देना चाहता है, उसे ही अभिव्यक्ति पक्ष माना जाता है। यह विदित तथ्य है कि प्रत्येक रचना का कोई न कोई उद्देश्य अवश्य होता है। यह उद्देश्य भाव पक्ष की पूर्णता पर ही आधारित होता है। भाव पक्ष किसी भी रचना का अनिवार्य अंग माना जाता है।

अब दूसरा पक्ष आता है, जिसे कला पक्ष के नाम से जाना जाता है जिस प्रकार अभिव्यक्ति पक्ष अनिवार्य होता है उसी प्रकार महत्त्वपूर्ण कला पक्ष भी होता है। मानव का मन भिन्न–भिन्न प्रकार के भावों से उद्वेलित–प्रेरित होता रहता है। वह इन भावों की अभिव्यक्ति करना चाहता है। भाव आंतरिक एवं सूक्ष्म होते हैं जिन्हें किसी बाह्य और स्थूल माध्यम की आवश्यकता का अनुभव होता है। इस आवश्यकता की पूर्ति का आवश्यक एवं महत्त्वपूर्ण साधन भाषा को माना जाता है। कला पक्ष के सर्वाधिक आवश्यक तत्त्व के रूप में यदि किसे माना माना जाता है, तो यह भाषा ही होती है। यह भाषा विश्व की भाषाओं में से कोई भी हो सकती है। विद्वत, वर्ग ने अक्सर यह माना है कि किसी भी रचना का उद्देश्य गरिमामय अथवा महान् होना चाहिए। यह जन सामान्य का प्रेरणास्त्रोत हो, जिससे जन सामान्य को उच्च आदर्शों की प्रेरणा मिल सके। इस गरिमामय संदेश के साथ–साथ रचनाकार से यह अपेक्षा भी की जाती है कि वह जिस भाषा में अपनी विचाराभिव्यक्ति करे, वह भाषा भी शुद्ध एवं उच्चकोटि की होनी चाहिए। उच्च एवं उपयुक्त भाषा प्रयोग के साथ–साथ कुछ भाषायी उपकरणों की अपेक्षा भी रहती है। ये उपकरण भावों की अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करते हैं। इसके साथ–साथ ये सहायक उपकरण भाषा सौंदर्य एवं गूढ़ अर्थों की प्रतीति में भी सहायक सिद्ध होते हैं। इन सहायक उपकरणों में छंद, अलंकार, प्रतीक, बिम्ब, लोकोक्ति एवं मुहावरे आदि की महत्त्वपूर्ण भूमिका मानी जाती है। प्रतीक, बिम्ब ऐसे उपकरण होते हैं, जो रचनाकार के भावों को पाठकों के समझ सजीवता प्रदान करते हैं। उदाहरणार्थ 'बिम्ब' पर ही यदि दृष्टिपांत करें तो यह ज्ञात हो जाता है कि बिम्ब किसी भी रचना में कितना महत्त्वपूर्ण उपकरण होता है, रचनाकार अपने शब्द रूपी उपकरणों से तरास कर ऐसे चक्षु बिम्बों का निर्माण कर देते हैं कि जैसे पाठक शब्दों के माध्यम से उक्त वस्तु का साक्षात् कर रहे हों। अलंकार आदि भाषा के सौदर्य की अभिवृद्धि करते हैं, तो प्रतीक भी अपेक्षित भाव की अभिव्यक्ति को सार्थकता प्रदान करने की क्षमता से परिपूर्ण होते हैं। इसी प्रकार भावों को सार्थकता प्रदान करने में मुहावरे व लोकोक्तियों की भी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। इनके द्वारा रचनाकर के विचारों

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

की पुष्टि हो जाती है तथा रचनाकार के विचार अथवा भाव समाज स्वीकार्य बन जाते हैं। इसी प्रकार कूटपद एवं पहेली भी कला पक्ष को पूर्णता प्रदान करते हैं। ये रचनाकार के गूढ़ अर्थों की अभिव्यंजना में अति सहायक होते हैं।

2 भाषिक–विधान

बेनामी जी ने अपने एकमात्र ग्रंथ 'बेनामी आत्म–बोध' में भाव भाक्ष एक एवं कला पक्ष का उपयुक्त मिश्रण किया है। अपने उद्देश्य की पूर्ति हेतु जिस भाषा रूपी साधन को उन्होंने चुना है, वह राष्ट्रभाषा हिन्दी है, जिसमें भिन्न–भिन्न क्षेत्रीय भाषाओं के शब्दों का प्राचुर्य दृष्टिगोचर है एवं इन्हीं के कारण भाषा पूर्णता और व्यापकता को छू लेने का प्रयत्न करती प्रतीत होती है। भावों की सटीक अभिव्यक्ति, सजीवता एवं सार्थकता हेतु प्रतीक, बिम्ब, पहेली, मुहावरे आदि का ासार्थक एवं उपयुक्त प्रयोग ग्रंथ में आद्योपांत दृष्टिगत होता है। इनके साहित्य के कला पक्ष का मूल्यांकन करने से पूर्व यह तथ्य विस्मृत नहीं किया जाना चाहिए कि इन्होंने अपने लक्ष्य की प्राप्ति के प्रयोजनार्थ ही अपनी भावाभिव्यक्ति ग्रन्थान्तर्गत की है। अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए इन्होंने भाषा की शुद्धता पर विशेष ध्यान नहीं दिया है। इन्होंने अपनी भावाभिव्यक्ति छंदबद्ध भाषा में की है। छंदबद्धता के कारण ही कदाचित् इन्होंने लघु वर्ण को गुरू एवं गुरू को लघु बना दिया है जो भाषा की अशुद्धता का एक कारण प्रतीत होता है। भावाभिव्यक्ति को सर्वजनसुलभ कराने हेतु जन सामान्य के आंचालिक शब्दों का प्रयोग भी बेरोकटोक किया गया है।

3 रस–विधान

"दार्शनिक जगत् में ब्रह्म का जो स्थान है, वही काव्यशास्त्र में रस का है। काव्यशास्त्र विशारद न होने पर भी संत कवियों ने रसों को कविता की आत्मा मानकर उनका यथोचित् प्रतिपादन किया गया है। ब्रह्म की व्याख्या एवं भक्ति के प्रचार रूपी काव्य प्रयोजनों को पूर्णतः निभाने के लिए उन्होंने मुख्यतः अद्भुत एवं शांत रसों को उपयोगी समझा।"[1]

"'रस' शब्द रस्+अच् के योग से बना है, जिनका कोशगत अर्थ है, सार। काव्यशास्त्रीय अर्थ में, ''रस'' का प्रयोग उस 'आनंद' के अर्थ में होता है, जो काव्य श्रवण या नाट्य दर्शन से आविर्भूत होता है। यह अनिर्वचनीय तथा लोकोतर आनंद होता है।"[2] रस की इस काव्यशास्त्रीय परिभाषा के उपरांत यह स्पष्ट हो जाता है कि रस का काव्य में अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान है। इतना ही नहीं रसाभाव में कोई भी रचना अपना महत्त्व खो बैठती है।

बेनामी जी के काव्य में 'रस विधान' पर दृष्टिपात करते समय यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि ये ज्ञान मार्गी निर्गुण भक्त थे। मूलतः संत होने के कारण इनकी की अधिकांश उक्तियाँ शांत रस से युक्त हैं। इन्होंने की भक्ति से संबंधित सभी उक्तियों में शांत रस की सफल अभिव्यक्ति दृष्टिगोचर है। श्री बेनामी जी ने कबीर, रैदास आदि संतों की ही तरह शांतरस को सर्वोच्च स्थान पर रखा है। शांत रस से युक्त एक उदाहरण इनकी वाणी में देखा जा सकता हैः–

"महामलीन मन घर घर डोले, उदर भरन के हेत।
द्रव्य हेत निशि दिन भटकत है, संतों को दुख देत।।[3]

शांत रस का स्थायी भाव निर्वेद को माना जाता है। इनके संपूर्ण काव्य में निर्वेद भाव की अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। सांसारिक वस्तुओं के प्रति उदासीनता, वैराग्य आदि के भावों से ही निर्वेद भाव उत्पन्न होता है। इस तरह काव्य में शांत रस का पूर्ण परिपाक हुआ है। यह शांत रस संत भक्ति काव्य में अपनी

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

पराकाष्ठा पर पहुँचा प्रतीत होता है। इनकी सभी उपेदशात्मक उक्तियां शांत रस से युक्त हैं। जैसी इनकी प्रवृत्ति थी इसी के अनुरूप ये संपूर्ण मानव जाति को बनाना चाहते थे। बेनामी जी अपने रस विधान में पूर्णरूप से सफल रहे हैं। जिस रस की अभिव्यक्ति इन्होंने की है, वह उनकी मानसिक अवस्था के अनुरूप हुई है। अपनी मानसिक अवस्था के अनुरूप इन्होंने अपनी वाणी प्रकट की है। ये उच्च कोटि के संत एवं योगी पुरूष थे। स्वयं के उद्धार के साथ–साथ ये संपूर्ण मानवता का उद्धार चाहते थे। इसीलिए मनुष्य को सचेत करते हुए श्री बेनामी जी कहते हैंः–

"जब लग मन चंचल रहे, तब लग ब्रह्म न पाय।
जब मन अंदर थिर भया, आपे आप समाय।।"[4]

इस पद में भी निर्वेद की तरफ ही संकेत है। इनके साहित्य में कुछ ऐसी पद भी हैं, निनमें दाम्पत्य प्रेम की श्रृंगारपरक अभिव्यक्ति हुई है। इस तरह की उक्तियों में इन्होंने ब्रह्म का रहस्यात्मक चित्रण किया है। ऐसी उक्तियां सांसारिक श्रृंगारिक होती हुई भी इनकी आध्यात्मिक आकांक्षा की पराकष्ठा की प्रतीक हैं। श्रृंगारपरक ये उक्तियां वियोग एवं संयोग दोनों ही भावाभिव्यक्तियों को समेटे हुए हैं। ऐसी उक्तियों में श्रृंगार की सुखद अभिव्यक्ति बड़ी आकर्षक बनी पड़ी है। ऐसा ही एक उदाहरण देखा जा सकता हैः–

"फेरों की त्यारी हुई, लगन लगी है आय।
दुल्हन दुल्हा इकट्ठे, कोई दीना पटा बिछाय।"[5]

इस प्रकार के पदों में संयोग श्रृंगार की सुखद परंतु आध्यात्मिक अभिव्यक्ति हुई है। बेनामी जी ने अपने आध्यात्मिक एवं रहस्यवादी गूढ़ार्थों की अभिव्यक्ति हेतु अद्‌भुत रस की सृष्टि भी स्थान–स्थान पर की है। इन्होंने जब–जब आध्यात्मिक मिलन के भावों को कूटपदों में अभिव्यक्ति किया है, अद्‌भुत रस का प्रस्फुटन स्वतः हो गया है। इस प्रकार शांत रस के प्रयोग के साथ–साथ अद्‌भुत रस की सुंदर अभिव्यक्ति भी इनके पदों में परिलक्षित की जा सकती है। ऐसा ही एक उदाहरण दृष्टव्य है, जिसमें अद्‌भुत रस की रोमांचक अभिव्यक्ति हुई हैः–

"बिन पग नाचै बिन मुख गावै, निरालम्ब को लहरो।
बेनामी को ऊँचों डेरो, सुन्य सिकर चढ़ हेरो।।"[6]

इसी तरह के पदों में अद्‌भुत रस की सुंदर रहस्यपूर्ण अभिव्यक्ति दिखाई देती है। अद्‌भुत रस की रोमांचक उक्तियां इनकी रहस्यपूर्ण अभिव्यक्ति का सरस माध्यम हैं। इसी प्रकार का अन्य उदाहरण प्रस्तुत है जिसमें इन्होंने अपने भावों की कूट अभिव्यक्ति की हैः–

"फल टपके पृथ्वी नहीं, आये फल हैं दोय।
फल कूं पकड़ वृक्ष में लावे, मेरा गुरू है सोय।।"[7]

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि इन्होंने अपनी संत एवं वैरागमयी प्रवृत्ति के अनुरूप शांत रस का प्रयोग मुख्य रूप से किया है। शांत रस के साथ–साथ इनकी वाणी द्वारा आत्मा–परमात्मा के रहस्यमयी संबंधों में अद्‌भुत रस की स्वतः अभिव्यक्ति हुई है। दाम्पत्य संबंधों की व्यंजना हुई है वहाँ संयोग श्रृंगार की सुंदर अभिव्यक्ति परिलक्षित की जा सकती है। बेनामी जी का काव्य एक समर्पित संत एवं भक्त का भक्तिपूर्ण एवं मोक्ष प्राप्ति का काव्य है। इनके काव्य में शांत, एवं अद्‌भुत रस के साथ–साथ दूसरे रसों की गौण अभिव्यक्ति भी हुई है।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

4 अंलकार–विधान

विद्वानों ने अलंकारों के अनायास प्रयोग को काव्य की शोभा का एक प्रमुख कारण माना है। अलंकारों का सायास प्रयोग कविता की नैसर्गिकता को नष्ट कर देता है। यहाँ यह बात ध्यान देने योग्य है कि संतों का कथ्य अपनी अमृत वाणी को जन–जन तक पहुँचाना एवं भक्ति–साधना आदि द्वारा ईश्वरोन्मुखता रहा है, अलंकारों पर प्रकाश डालना नहीं। अतः इनके काव्य में अलंकारों का प्रयोग स्वतः ही हो गया है। जहाँ तक बेनामी जी के काव्य में अलंकारों का प्रश्न है, तो इनके साहित्य में रूपकों के दर्शन प्रायः हो ही जाते हैं। इन रूपकों में हठयोगियों की साधना के रूपकों का प्रमुख स्थान है। इन्होंने अपने दार्शनिक चिंतन में सरल प्रतीकों का सहारा लेकर रूपकों का प्रयोग किया है। इन रूपकों के द्वारा बेनामी जी ने अपनी आध्यात्मिक अभिलाषा की पूर्ति की है। इन्होंने 'खेत' को ईश्वर का, 'हंस' पवित्र आत्मा का, 'ब्याह' मृत्यु एवं ईश्वर मिलन का, 'दुल्हन' आत्मा का, 'दुल्हा' परमात्मा का, 'ठाकुर' दिव्य ज्योति, शून्य शिखर आदि ईश्वर के, 'पलंग' शरीर का, 'रावण' अहंकार का तथा 'राम' ज्ञान के रूपक में प्रयुक्त हुए हैं। इसी प्रकार अन्य निर्गुण संतों की भांति दूसरे हठयोग साधनात्मक रूपकों का प्रयोग भी इन्होंने किया है। एक उदाहरण देखा जा सकता हैः–

"फेरों की त्यारी हुई, लगन लगी है आय।
दुल्हन दुल्हा इकट्ठे, कोई दीना पटा बिछाय।।"[8]

इस प्रकार के दाम्पत्य भाव के रूपक इनके 'आत्म–बोध' में स्थान–स्थान पर देखने को मिल जाते हैं। इन्होंने ऐसे रूपकों द्वारा सामान्य जनता की बुद्धि को खूब झकझोर कर रख दिया है। संत प्रवृत्ति के बुद्धिजीवी लोग ही ऐसे प्रतीकों को सहजतापूर्वक समझ पाते हैं। सामान्य बुद्धि के जन मानस दूल्हा एवं दुल्हन के शाब्दिक एवं सांसारिक अर्थों तक ही सीमित रह जाते हैं। ऐसे–ऐसे रूपकों का प्रयोग भी इन्होंने किया है, जो सामान्य लोगों तक सहज में ही पहुँच जाते हैं। एसे रूपकों में रावण, लंका एवं राम आदि के चिरपरिचित पौराणिक रूपकों को लिया जा सकता है। कबीर काव्य की भांति 'कुम्हार' के रूपक को बेनामी जी ने भी गुरू के अर्थ में ही प्रयुक्त किया है। इन विभिन्न रूपकों के प्रयोग से इनकी अभिव्यक्ति को गूढ़ता एवं अर्थपूर्णता प्राप्त हो गई है। स्पष्टतः ही इनके काव्य में रूपकों का सहज प्रयोग हुआ है, जो ज्ञान मार्ग निर्गुण संत भक्ति धारा का परम्परागत नमूना है। रूपकों का प्रयोग ज्ञानमार्गी निर्गुण संतो की हठयोग साधना की परम्परास्वरूप ही हुआ है। परंतु दूसरी तरफ बेनामी जी के साहित्य में अन्य अलंकारों का स्वाभाविक प्रयोग भी यत्र–तत्र दिखाई देता है। प्रयत्नस्वरूप इनके साहित्य में रूपकों का प्रयोग किया गया है। पंरतु अन्य अलंकारों का अनायास प्रयोग भी काव्य–सौंदर्य की अभिवृद्धि में सहायक सिद्ध हुआ है। इनके काव्य में अनुप्रास, उपमा, विभावना आदि अलंकारों का प्रयोग स्थान–स्थान पर देखा जा सकता है। इनके अतिरिक्त पुनरूक्तिप्रकाश एवं उत्प्रेक्षा अलंकारों का प्रयोग भी यथास्थान दृष्टिगोचर है। उदाहरणार्थ–'गिनते–गिनते गिनलिये', 'मेरा मन मोह', 'काम क्रोध को मारके', 'भ्रकुटी भवन में भँवर' आदि पंक्तियों में अनुप्रास अलंकार को देखा जा सकता है। इसी प्रकार 'गगन गरज' 'भगा भरम', 'दीदार दिया', दिलवर दिल', 'सर्वज्ञी सर्व' 'पुरूषोत्तम पूरे' 'मदन मान', 'ममता माया', 'जोग जुगत', 'सुन्य सिकर', आदि अनेकों स्थानों पर अनुप्रास अलंकार की सहज आवृत्ति देखी जा सकती है। इसके अतिरिक्त 'सहज सहज' 'घट घट', 'न्यारो न्यारो' आदि पदों में पुनरूक्तिप्रकाश अलंकारों का प्रयोग देखा जा सकता है। इन अलंकारों के अतिरिक्त इन्होंने विशेषोक्ति एवं विभावना अलंकारों के माध्यक से गहन अर्थों की अभिव्यंजना की है। ऐसे–ऐसे उदाहरणों की पुष्टि में 'डूब गया सब जग बिन पानी' जैसी पंक्तियां पढ़ी जा सकती हैं। इनके अतिरिक्त अन्य स्थानों पर भी ऐसी अभिव्यक्ति देखी जा सकती है। उन्होंने लिखा हैः–

"सिरहाने नदिया बहे, प्यास मरी दिन रात।
करम कपट उर में बसे, ऊबट–ऊबट जात।।"[9]

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

प्रस्तुत पद में इन्होंने ने विशेषोक्ति के माध्यम से विषयी जीवन जीने वाले लोगों की विडम्बनापूर्ण स्थिति का चित्रण किया है। इसी प्रकार एक अन्य स्थान पर अपने गूढ़ार्थ की अभिव्यक्ति करते हुए लिखा हैः–

"बिना तेल दीवा बलै, बाती देखी नांय।
बिन दीवा दीवा बलै, दीवा भी वहाँ नांय।।"[10]

ऐसे–ऐसे स्थलों पर इन्होंने गहन अर्थों को साधने में सफलता प्राप्त की है। अलंकार विधान पर चर्चा करते हुए समय भी स्पष्ट करना चाहता हूँ कि बेनामी जी ने रूपक का प्रयोग अपनी साधना–पद्धति की प्रकृति के अनुरूप किया है। पुनरूक्तिप्रकाश अलंकार का प्रयोग एक विशेष कथन पर अत्यधिक बल देने की प्रवृत्ति के परिणामस्वरूप हुआ है। इस प्रकार इनके काव्य में अलंकारों का प्रयोग यदा–कदा होता रहा है।

अंत में बेनामी जी के साहित्यान्तर्गत प्रयुक्त अलंकार विधान पर प्रकाश डालते हुए यह कहना चांहूगा कि इन्होंने अपनी अध्यात्मिक प्रवृत्ति की पूर्ति हेतु हठयोग साधना पर आधारित रूपकों का सायास समां बाधां है, परंतु अन्य अलंकारों का प्रयोग काव्य ही सहज प्रवृत्ति के अनुरूप हुआ है। इनके अलंकार इनकी वाणी पर बोझ अथवा लादे हुए प्रतीत नहीं होते हैं। अलंकारों के प्रयोग से काव्य के नैसर्गिक सौंदर्य को कोई क्षति पहुंची प्रतीत नहीं होती है। इनको अपनी भावाभिव्यक्ति प्रिय थी, अलंकार आदि सहायक उपकरणों को महत्त्व का मोह इन्हें नहीं था।

5 बिम्ब–विधान

बिम्ब की परिभाषा

i) "कल्पना या स्मृति में उपस्थित चित्र अथवा प्रतिकृत्ति जिसके लिए यह अनिवार्य नहीं कि वह चाक्षुष हो।।"[11]
ii) "किसी पदार्थ का मनश्चित्र अथवा मानसी प्रतिकृति।"[12]
iii) "बिम्ब एक प्रकार का शब्द चित्र है।"[13]
iv) "बिम्ब एक अमूर्त विचार या 'भावना' की पुनर्रचना है।।"[14]
v) "बिम्ब ऐन्द्रिय माध्यमों के द्वारा आध्यात्मिक या तार्किक सत्यों तक पहुंचने का मार्ग है।।"[15]
vi) "बिम्ब एक प्रकार का चित्र है, जो किसी पदार्थ के साथ विभिन्न इन्द्रियों के सन्निकर्ष से प्रमाता के चित्र में उद्‌बुध हो जाता है।"[16]

इन परिभाषाओं के आधार पर अब यह कहा जा सकता है कि शब्दों के अर्थ ग्रहण से मनुष्य के मस्तिष्क पटल पर जो चित्र अंकित होता है, उसे बिम्ब कहा जाता है। एक प्रकार से यह किसी वस्तु, पदार्थ आदि की प्रतिकृति है। इसी संदर्भ में यह कहना भी नितांत आवश्यक है कि उक्त परिभाषा बिम्ब के सरल रूप को ही प्रतिबिम्बित करती है। इसका वास्तविक रूप अपेक्षाकृत अधिक जटिल हो सकता है। काव्य में बिम्बों की सृष्टि से अर्थ ग्राह्यता में स्पष्टता आती है। बिम्बों का पाठन करते समय पाठकों की आंखों के सामने अर्थ स्वतः मुखर हो उठते हैं। जिस बिम्ब की सृष्टि रचनाकार अपने शब्दों के द्वारा करता है, उसका चित्र पाठक की आंखों में अनायास ही सजीव हो उठता है। इसी कारण रचनाकार विभिन्न बिम्बों की सृष्टि करते रहे हैं। इस प्रकार यह कह सकते हैं कि बिम्ब कविता में प्रयुक्त भावपूर्ण शब्द चित्र माने जाते हैं। बिम्बों की सृष्टि से अर्थ सम्प्रेषणियता में स्पष्टता आती है। बिम्ब का जन्म रचनाकार के मस्तिष्क में उस समय होता है, जब वह अपनी किसी कल्पना विशेष को लेकर उसे रूपाकार देने को कटिबद्ध हो जाता है।

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

"बिम्ब' शब्द को अंग्रेजी के 'IMAGE' शब्द का पर्याय माना जाता है। अंग्रेजी में 'इमेज' से मानसिक, प्रतिकृति, मानस प्रत्यक्ष सचेष्ट स्मृति या किसी वस्तु की सदृशता आदि अर्थों का बोध होता है।"[17]

भारतीय मतानुसार बिम्ब को परिभाषित करते हुए बताया गया है कि 'बिम्ब एक प्रकार की मानविक प्रतिकृति अथवा मनस्–चित्र है और "काव्य बिम्ब" शब्दार्थ के माध्यम से कल्पना द्वारा निर्मित एक ऐसी (विशिष्ट) मानस छवि है, जिसके मूल में भाव की प्रेरणा रहती है।[18] दूसरी तरफ यदि बिम्ब की भारतीय परिभाषा के पाश्चात्य् विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषा पर ध्यान दें तो यह भी इसी परिभाषा से मेल खाती प्रतीत होती है। इनके अनुसारः–

"Image is Artificial imitation of the external form of an object."[19]

दोनों प्रकार की बिम्ब विषयक परिभाषाओं के आलोक मे यह कहा जा सकता है कि बिम्बों की सृष्टि के द्वारा कोई रचनाकार अपने हृदय की गहन संवेदना एवं किसी विशेष भावना को अधिक प्रभावशाली ढ़ंग से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है ताकि वह अपनी उस भावना व संवेदना को अधिक सजीव रूप प्रदान कर सके।

जहाँ तक श्री बेनामी जी के साहित्य में प्रयुक्त बिम्बों का सवाल है, तो यह स्पष्ट है कि इनके काव्य में बिम्बों की सहज सृष्टि होती चली गई है। अपने साध्य की प्राप्ति हेतु इन्होंने स्थान–स्थान पर भिन्न–भिन्न गूढ़ कल्पना आदि के द्वारा अनेक प्रकार के बिम्बों की सृष्टि की है। यह सृष्टि सायास व अनायास दोनों ही प्रकार की प्रतीत होती है। योग–साधना की किसी विशेष मुद्रा आदि की स्पष्टता में सायास बिम्ब सृष्टि के दर्शन प्रायः होते रहे हैं। बेनामी जी द्वारा निर्मित चाक्षुष बिम्ब का एक सुंदर चित्र देखा जा सकता है जिसके पढ़ते ही एक सजीव चित्र आंखों के सामने उपस्थित हो जाता है। ये लिखते हैंः–

"मन समुद्र के बुदबुदे, मन हू मनोरथ माँय।
उपजे विनसे रहत हैं, जल के जल ही माँय।।"[20]

इस बिम्ब सृष्टि के माध्यम से समुद्र के बुलबुले का चित्र हमारे चक्षुओं के सामने प्रस्तुत किया गया है। इसी प्रकार इन्होंने अनेकों बिम्बों की योजना अपनी कल्पना के द्वारा की है। बेनामी जी ने बिम्बों के माध्यम से अभीष्ट वस्तु अथवा अवस्था को पूर्णतः सजीव कर दिया है। ऐसा ही एक उदाहरण प्रस्तुत है, जो एक पूर्ण चित्र को सजीव करने में सक्षम प्रतीत होता हैः–

"फेरों की त्यारी हुई, लगन लगी है आय।
दुल्हन दुल्हा इकट्ठे कोई दीना पटा बिछाय।।"[21]

6 छंद–विधान

"छंद शब्द काफी पुराना है। इतना पुराना कि सबसे प्राचीन ग्रंथ कहलाने वाले वेदों का दूसरा नाम ही छंदस् है।"[22] "छंद को छंद इसलिए कहा जाता है कि वह छादन करता है–ढ़कता है (यदाच्छादयन् तच्छंदसांछंदस्त्वम)।"[23]

"वस्तुतः छंद एक लय विशेष के अनुरूप वर्ण या मात्राओं का नियम, बंधन या ढ़ाँचा है जिसके लिए चरणांत में समता अनिवार्य नहीं है। उसमें गति और यति होनी चाहिए। जिस प्रकार नदी के तट अपने बंधन से धारा की गति को सुरक्षित रखते हैं, जिसके बिना वह अपनी ही बंधन हीनता में अपना प्रवाह खो बैठती

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

है।"[24] "पुनः यह कहा जा सकता है – निश्चित वर्णों या मात्राओं की विराम–गति या यति आदि से बंधी हुई शब्द योजना को छंद कहते हैं।"[25]

अतः इन परिभाषाओं के आलोक में यह कह सकते हैं कि वर्णों या मात्राओं की एक निश्चित शब्द योजना का नाम ही छंद है, जिसमें यति, गति या विराम आदि की उचित एवं सुनियोजित व्यवस्था पाई जाती है।

बेनामी जी के ग्रंथ का अध्ययन करने के उपरांत मैंने पाया कि इनके ग्रंथ में अनेक छंदों का प्रयोग किया गया है, जिनसे दोहा, चौपाई, सोरठा, छप्पेय, कवित्त, कुंडलिया, सवैया तथा आल्हा आदि छंदों को प्रमुख माना जा सकता है, संत बेनामी जी ने अपनी वाणी को छंद बद्ध शैली में आबद्ध किया है। मुक्तछंद कहीं प्रयोग नहीं किया गया है। इन्होंने सर्वाधिक रूप में दोहा छंद का प्रयोग किया है। सर्वप्रथम यदि दोहा छंद ही लिया जाए तो ज्ञात होता है कि इन्होंने अपने ग्रंथ के 'बारहखड़ी' शीर्षकान्तर्गत दोहा छंद में ही अपनी वाणी को विस्तार दिया है। इस छंद के प्रथम और तृतीय चरण में तेरह–तेरह मात्राएँ होती हैं और द्वितीय तथा चतुर्थ चरण में ग्यारह–ग्यारह मात्राएँ होती हैं। चरणों के अंत में गुरू एवं लघु का संयोग होना चाहिए। इन्होंने अपने ग्रंथ में दोहा छंद का सर्वाधिक प्रयोग किया है, परंतु ऐसा नहीं है कि इन्होंने दूसरे छंदों का प्रयोग नहीं किया। बेनामी जी के दोहे के स्वरूप को निम्न पद में देखा जा सकता हैः–

"जोगी के देही नहीं, रहे जगत के मांय।
जैसे जल मे कमल है, ज्यों जल परसत नाय।।"[26]

इस प्रकार देखा जा सकता है कि इन्होंने दोहा छंद का सफल प्रयोग अपने काव्य में किया है। इस तरह के अनेक उदाहरण ग्रंथ में देखे जा सकते हैं, जिनमें दोहा छंद व्यवहृत हुआ है। इसके पश्चात् अब यदि चौपाई छंद की बात की जाए तो यह स्पष्ट होता है कि इन्होंने चौपाई छंद का सफल प्रयोग अपनी अभिव्यक्ति में किया है। अपेक्षाकृत अपनी व्यापक भावाभिव्यक्ति हेतु बेनामी जी प्रायः चौपाई छंद को ही चुना है। क्योंकि इसमें दोहे की अपेक्षा अधिक शब्दों का प्रयोग किया जाता है। इनकी वाणी में चौपाई छंद का एक उदाहरण देखा जा सकता हैः–

"नैन मीच मो को पहिचाने, खोले तो सब मे मोय जाने।।
ऐसी दृष्टि लखे जो कोई, निश्चय मोसे मिलना होई।।[28]

7 संगीत–संसृष्टि

बेनामी जी के पदों में गेयता का गुण विद्यमान है। काव्य में गेयता का सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व संगीतात्मकता होता है। इनके अधिकतर पद इनके शिष्यों द्वारा उनकी मूल गद्दी 'भूरा सिद्ध का बाड़ा' में गाए जाते हैं। उनके पदों को पढ़ने पर संगीत की मधुर ध्वनि स्वतः ही फूट पड़ती है। इनके भाव गहन एवं आध्यात्मिकता से परिपूर्ण रहस्यवादी हैं। उनके रहस्यवादी गूढ़ भाव इनके हृदय की रागात्मक वृत्ति के द्योतक हैं। यह माना जाता है कि संगीत की सृष्टि के लिए रागात्मक वृत्ति का होना अनिवार्य है। इनके काव्य में भाव की एकता उनकी रागात्मकता से पुष्ट होती हुई संगीत की सृष्टि करती चली गई है। इनके अनेकों पदों से संगीत की मधुर ध्वनि प्रस्फुटित होती है। इसी के परिणामस्वरूप इनके काव्य में स्थान–स्थान पर संगीत के अनुकूल कोमलकांत शब्दावली का प्रयोग हुआ है जो संगीत की सृष्टि की मूल मानी गई है। इनके पदों को बेनामी पंथ के डेरों में भक्तजनों द्वारा गाया जाता है। मैंने स्वयं' अलवर (राजस्थान) स्थित 'भूरा सिद्व का बाड़ा' में जाकर देखा कि वहाँ उपस्थित अनेक भक्तजन इनकी आरतियों का गान कर रहे थे। अद्वैत ज्ञान से परिपूर्ण ये आरतियां इनके ग्रंथ, 'बेनामी आत्मबोध' में संकलित ग्रंथ का महत्त्वपूर्ण अंग हैं। इन्होंने अपने

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

ग्रंथ के अंतर्गत 'होरी' शीर्षक का आयोजन किया है। इस शीर्षक में इनकी आध्यात्मिक होली खेलने के पदों में संगीत का सौंदर्य सहज ही देखा जा सकता हैः–

"बाजत ताल मृदंग झांझ ढ़प,
डिमक डिमक डैरू बाजै अनहद में।।
नाचत कृष्ण गोपी ग्वाल बाल संग।
ताता थेई ताता थेई हो रही तन मे।
उड़त गुलाल अबीर कुमकुमा,
चंद्र सूर्य छिपे हैं गगन में।।
इड़ा पिंगला ताल बजावत,
गन गन्द्रव गावत सुख मन में।।
करत बेनामी सैल याही तन में,
मन को पकर बस किया एक छन में।।"[29]

इनके इन पदों में संगीत की सृष्टि सहज सुनाई पड़ती है। इसी प्रकार इनके अन्य पदों में भी संगीतात्मकता का गुण देखा जा सकता है। ग्रंथान्तर्गत्त आए 'पद' शीर्षक के प्रायः सभी पद संगीत के गुण से परिपूर्ण हैं। इन पदों में इन्होंने मनुष्य को सांसारिक विषय–वासनाओं से सचेत करने का संगीतमय उपदेश दिया है।

अतः संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि इनके काव्य में आत्माभिव्यक्ति की निर्मलता, भाव की एकता एवं प्रभान्विति का उज्ज्वल विधान है। इन्होंने अपने ऐसे पदों में अनुभूति और संगीत का सुंदर समन्वय किया है।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ0 गोविंद त्रिगुणायतः कबीर का अभिव्यंजना कौशल, पृ0133
2. इन्दिरा गाँधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय, मानविकी विद्यापीठः 'साहित्य एवं उसके अंग, 'पृ046.
3. बेनामी आत्म–बोध, 'आरती पद', पृ016
4. बेनामी आत्म–बोध, 'चिंतामणी' पृ0167
5. वही, 'परमहंसन का विवाह' पृ092
6. बेनामी आत्म–बोध, 'पद' शीर्षक पृ0131
7. वही, 'आल्हा' शीर्षक पृ0101
8. बेनामी आत्म–बोध 'परमहंसन का विवाह', पृ092
9. बेनामी आत्म–बोध, 'सिधांतवार्त्ता' शीर्षक, पृ074
10. वही, 'आल्हा' शीर्षक, पृ097
11. वही, पृ00–14
12. वही, पृ014
13. वही, पृ014
14. वही, पृ014
15. वही, पृ014
16. वही, पृ014
17. Chamber's Twentieth, Century Dictionary – Page 527
18. डॉ0 नगेन्द्रः काव्य बिम्ब, पृ05

ISSN- 2350-0530(O), ISSN- 2394-3629(P)
IF: 4.321 (CosmosImpactFactor), 2.532 (I2OR)
InfoBase Index IBI Factor 3.86

19. Shorter Oxfort Dictionary : Page 604
20. बेनामी आत्म–बोध, 'गीता' शीर्षक, पृ051
21. वही 'परमहंसन का विवाह' शीर्षक पृ092
22. इन्द्रिरा गांधी राष्ट्रीय मुक्त विश्वविद्यालय,मानविकी विद्यापीठः छंद एवं अलंकार, पृ06
23. वही, पृ06
24. वही, पृ07
25. वही, पृ07
26. बेनामी आत्म–बोध, 'आरती अद्वैत–ज्ञान', शीर्षक पृ010
27. बेनामी आत्म–बोध, 'सिधातवार्त्ता' शीर्षक, पृ057
28. बेनामी आत्म्म–बोध, 'होरी' शीर्षक, पृ0113–114

*Corresponding author.
E-mail address: mundarasatish@gmail.com